नाम : डॉ लोकेश्वर प्रसाद सिन्हा

महाविद्यालय का नाम : दुर्गा महाविद्यालय रायपुर *(छ.ग.)*

संकाय : कला

पद नाम : सहायक प्राध्यापक, हिंदी विभाग

विषय :संत कबीर की समाज दृष्टि

दिनांक :18/07/2023

संत कबीर की समाज दृष्टि

साहित्य एवं जीवन द्वारा परम्पराओं का जन्म भी होता है और परिपालन भी होता है। कबीर ने हमारे साहित्य की अनेक परम्पराओं को अपनी महत्वपूर्ण जन कल्याणकारी रचनाओं के द्वारा बल प्रदान किया और साथ ही साहित्य की महान परंपराओं को जीवन प्रदान किया। भूत की घटनाओं और वर्तमान के कठोर सत्यों को इन्होंने भविष्य से श्रृंखलाबद्ध कर दिया। उनके साहित्य में संस्कारगत रूढ़ियों, साहित्यिक मान्यताओं और तत्कालीन परिस्थितियों का अद्‌भुत समन्वय एवं चित्रण मिलता है। परंपरा भूत और वर्तमान के सोपानों को पार करती हुई भविष्य की ओर अग्रसर होती है। दूसरे शब्दों में वह अतीत से भविष्य की ओर प्रगति की मूल धारा है, जो क्रमशः चली आ रही है, परंतु उस सरिता के समान जो कहीं पर तीव्र गति से और कहीं पर मध्यम गति से बहती रहती है। इसमें सदैव एक तारतम्य बना रहता है और यही इसकी प्रभावित करने की शक्ति है ।

कबीर की परंपरा को समझने के पूर्व उनकी एक दो सामान्य विशेषताओं की ओर ध्यान देना आवश्यक है। कबीर स्वभाव से ही बुद्धिवादी और क्रांति प्रिय संत थे। उनका रूढ़ि विरोध क्रांति की सीमा तक पहुँच गया था। साथ ही उनके निष्कपट व्यवहार ने उन्हें अत्यधिक लोकप्रिय बना दिया है। कबीर सच्चे सत्यान्वेषक थे। सत्य का अन्वेषण उन्होंने केवल कल्पना से नहीं किया है, वरन अनुभवों की शिला पर सत्य की खोज के साथ धर्म के सामान्य तत्वों पर अधिक बल दिया।

सामान्यतया कबीर साहित्य की मुख्य परम्पराएँ हैं

1. मानवतावाद 2. धार्मिकता 3. जातीयता 4. प्रगतिशीलता 5. शाश्वतता 6. सजीवता

मानवतावाद

कबीर साहित्य की सर्वप्रथम महान परंपरा मानवतावाद है। भारतीय दर्शन के इतिहास में मानवतावाद के चिंतन और विश्लेषण का सर्वोत्तम समय था उपनिषद् काल।

मानवतावाद का आधारभूत या मूल सिद्धांत है समस्त प्राणियों को आत्म से भिन्न व समझना, समस्त जीवों में दया भाव का समान रूप से प्रसार करना, सबके दुःख की अनुभूति को आत्मानुभूति बनाना। इसका प्रमुख कारण है कि सबका रचयिता एक ही है। एक ही अंश के सब अंशी हैं, फिर मानव–मानव के बीच यह विरोध कैसा? न कोई बड़ा है, न कोई छोटा, न कोई उच्च है, न कोई नीच। एक ही ईश्वर ने सबको जन्म दिया है। सब समान हैं। जाति–पाँति का भेदभाव नहीं होना चाहिए। केवल कर्म से ही मनुष्य 'देव या दानवश कुछ भी बन सकता है।

कबीर के शब्दों में –

जाति न पूछो साधु की पूछो उसका ज्ञान।
मोल करो तलवार का पड़ी रहन दो म्यान।।

भारतीय मानवतावाद की पृष्ठभूमि में आध्यात्मिकता ही है। विदेशियों के भीषण आक्रमणों। से भी भारतीय योगियों की शांति भंग नहीं हुई। उनके यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, ध्यान, धारणा और समाधि बिना किसी विघ्न बाधा के चलते रहे। वे बाह्य संसार को छोड़कर ध्यानाव स्थित होकर आभ्यांतरिक सान में संलग्न रहे। आत्मा की स्वतंत्रता के आगे देश की। स्वतंत्रता का महत्व उनके मन में न बैठ सका। तथापि उन्होने उस ओर ध्यान न दिया।

कबीर के युग में जबकि उत्तर पश्चिम से अनवरत रूप से आक्रमण हो रहे थे, भारतीय धर्म, साहित्य एवं संस्कृति अत्याधिक संकटपूर्ण परिस्थितियों में स्वांस ले रही थी और जबकि निराशा भारतीय जनता को विनाश के गर्त की ओर

उत्तरोत्तर अग्रसर कर रही थी, उस समय कबीर ने अपनी मधुर वाणी से जीवों को समता और एकता का संदेश दिया।

युग प्रवर्तक रामानंद से प्रेरित और अनुप्राणित होकर संत कबीरदास ने मानवतावादी विचारधारा का प्रचार एवं प्रसार करने का प्रयत्न किया। इतना ही नहीं उन्होने भारतीय चिंतनधारा में एक नवीन परिच्छेद प्रारंभ किया जिसके द्वारा समानता की भावना को प्रसार मिला। कबीरदास ने एक ऐसा मार्ग प्रशस्त किया जिस पर उनके बाद के संतों ने आगे चलकर समता का उपदेश भारतीय जनता को समय–समय पर सुनाया। इनकी प्रेरणा से हिन्दी के ज्ञानाश्रयी भक्त कवियों की एक शाखा चल पड़ी। ये संत सभी जातियों के थे, उनकी मूल भावना थी 'हरि को भजै सो हरि का होई''। जाति–पाँति के भेदभाव से इन्हें मोह न था। इन्होने बड़े ही स्पष्ट शब्दों में ललकार कर कहा कि सभी एक ही ब्रह्म की कृतियाँ हैं। सभी एक ही कुम्हार की रचना है फिर ''को ब्राह्मन को सूदा''। भेदभाव तो मन का मेल है।

कबीर का लक्ष्य बड़ा ही व्यापक था। इन्होंने जीवों के निस्तार के लिए उच्चादर्शों के उपदेश दिए। मानव को कल्याणकारी पथ पर अग्रसर करना ही इनका सबसे बड़ा लक्ष्य था। कबीर के हृदय में व्यथित व्यक्ति हेतु सहानुभूति एवं संवेदना की भावना थी। वे संसार को सुखी और प्रसन्न देखना चाहते थे। इसी कारण उन्होंने मानव की आर्थिक, सामाजिक तथा आध्यात्मिक सभी दशाओं को सुधारने की चेष्टा की। मानवता को सदैव ही श्रृंखलाओं से उन्मुक्त देखना चाहते थे और भविष्य में एक स्वस्थ एवं आशापूर्ण दृष्टिकोण के आंकाक्षी थे। यह मानवतावादी दृष्टिकोण कबीर के साहित्य में ओत–प्रोत है। मानव के आध्यात्मिक और लौकिक जीवन को सुखी बनाने हेतु कबीर ने बारम्बार सन्मार्ग एवं कल्याणकारी पक्ष की ओर जनता का ध्यान आकर्षित किया। उन्होंने पारमार्थिक सत्ता की एकता निरूपित करके यह प्रतिपादित किया कि मानव–मानव में भेद नहीं है । सब प्राणी एक ही कलाकार की कृतियाँ हैं। हिन्दू और मुसलमानों ने

अपनी–अपनी मिथ्या कल्पना के आधार पर ब्रह्म के संबंध में निस्सार कल्पनाएँ स्थापित कर ली हैं। माया, भ्रम अथवा अज्ञान के कारण हम सत्य को नहीं देख पाते हैं। सत्य ही ब्रह्म है और ब्रह्म ही सत्य है। उसमें भेद नहीं है। वह पूर्णतया अद्वैत, अगम, अज्ञात, अमर और अनंत है। संसार का कोई भी कार्य उसकी इच्छा के बिना नहीं संपादित होता है। वह सर्वोपरि और सर्वश्रेष्ठ है। उस ब्रह्म को लेकर जो भेदभाव हिन्दू और मुसलमानों में चलते हैं वह निरी मूढ़ता का द्योतक है। अज्ञान का विसर्जन करके, मूढ़ता का परित्याग करके, प्रेम, सद्भावना और सहृदयता का प्रसार न केवल व्यक्तिगत जीवन के लिए वरदान है वरन समाज के उत्थान और विकास के लिए भी नितांत आवश्यक और उपयोगी है। सद्भावना के प्रसार से मनुष्य के जीवन में औदार्य, स्नेह, करूणा, प्रेम तथा विश्व बंधुत्व की भावनाओं का स्वतः विकास हो जाता है, जो मानव के लिए नितांत आवश्यक है। मनुष्य का स्वभाव श्रेय भी है, प्रेय भी है। धैर्यवान व्यक्ति दोनों को पृथक पृथक दृष्टि से देखते है। साधु श्रेय को ग्रहण करते हैं और असाधु प्रेय को।

मानवतावाद से प्रेरित होकर कबीर ने संसार को भाँति–भाँति के कल्याणकारी मार्ग प्रदर्शित करने का प्रयत्न किया। उनके मानवतावाद का केंद्र बिंदु है अद्वैत ब्रह्म। ब्रह्म अद्वैत है। वहीं सर्वजगत का नियंता है। ब्रह्म ही कबीर का प्रतिपाय और साध्य है।

पावक रूपी साइंया, सब घट रहा समाय।
चित चकमक लागे नहीं ताते बुझि बुझि जाय।।

मानवतावाद विषयक अपने विचारों के प्रसार के लिए कबीर ने सप्त महाव्रतों का उपदेश दिया, जिनसे मानव का व्यक्तिगत तथा समाजगत जीवन समुन्नत बनता है।

1. सत्य 2. अहिंसा, 3. ब्रह्मचर्य 4. अस्तेय 5. अस्वाद 6. अपरिग्रह 7. अभय।

सत्य व्यवहार, सत्य कर्म, सत्य वचन, सत्य अनुभूति जीवन को उदात्त बनाने में सहायक होती हैं और इस प्रकार मानव समाज सुखी और संपन्न बनता है । इसलिए कबीर ने कहा है।

साँच बराबर तप नहीं झूठ बराबर पाप।
जाके हिरदे, साँच है, ताके हिरदे आप।।

दूसरा महाव्रत है 'अहिंसा' । अंहिसा मानवतावाद की प्राण शक्ति है। जब तक हम हिंसा में लगे रहेंगे तब तक एक–दूसरे के प्रति समता की भावना की स्थापना कर ही नहीं सकते हैं।

घट घट में वह साई रमता।
कठक वचन मत बोल रे।।

कबीर ने भय की भावना को भी उत्पन्न कराके अहिंसा व्रत पालन करने का उपदेश दिया है।

मास मास सब एक है, मुरगी, हिरनी, गाय।
आँख देख जे खात है, ते नर नरकहि जाय।।

अहिंसा के विषय में लिखते समय कबीर का अर्थ केवल 'वध न करना' जीव न मारना, हिंसा न करना ही नहीं है, वरन् उस संकुचित क्षेत्र से बाहर कटुवचन तक बोलने को उन्होंने मना किया है ।

वासना में संलग्न मानव कभी भी साधना और परमार्थ में दत्त–चित्त नहीं हो सकता है। कबीर ने मन, वचन, कर्म से ब्रह्मचर्य का पालन करने का उपदेश दिया है। संयम जीवन के लिए सबसे बड़ा वरदान और प्रेरक शक्ति है। कबीर ने इसीलिए मानवतावादी भावना के प्रसार के लिए ब्रह्मचर्य को उपयोगी माना है। कबीर ने मानव की हर प्रकार की दुष्प्रवृत्तियों की आलोचना की। उन्होने अपने समय की जनता को बताया कि मनुष्य को एक दूसरे का शोषण नहीं करना

चाहिए। सबको दीनता की भावना ग्रहण करके सच्चाई और ईमानदारी के साथ जीवन यापन करना चाहिए। कबीर में स्पष्ट शब्दों में कहा है कि –

सबते लघुताई भली, लघुता ते तब होय।
जस दुतिया को चंद्रमा सीस नवै सब कोय।।

सच यह है कि यदि सभी संतोष और दीनता को ग्रहण कर लें तो संसार के समस्त अनाचार, दुराचार भ्रष्टाचार तथा संघर्ष समाप्त हो जाएँ और मानव, मानव बनकर जीवनयापन करने लगे। कबीर के मानवतावाद के संतोष एवं दीनता अभिन्न अंग हैं। इन उपदेशों ने युग–युग से पीड़ित एवं निराश जनता के हृदय में आशा का संचार किया। कबीर ने काव्य रचना में सजोये हुए सरल भावों द्वारा भटकती हुई जनता का पथ प्रदर्शन किया। पथ भ्रष्ट को मार्ग दिखाई पड़ा और बाह्म आडंबरों से दूर मानव एक दूसरे के दुःख एवं कष्ट की ओर ध्यान देने लगा। धीरे धीरे जनता इस ओर आकर्षित हुई।

धार्मिकता

कबीर साहित्य की द्वितीय महान परम्परा धार्मिकता है। इनके संपूर्ण साहित्य की रचना ही धर्म को दृष्टि में रखकर हुई है। यह अवश्य है कि धर्म के क्षेत्र में उन्होने एक क्रांति उपस्थित कर दी। परंतु फिर भी जिस कठोरता से रूढ़ियों का विरोध किया उसी दृढ़ता से उन्होंने बुद्धिवादी सिद्धांतों की भी स्थापना की है। वे किसी भी बाँत को तभी स्वीकार करते थे, जब वह उनकी बुद्धि के अनुभव की कसौटी पर खरी उतरती थी। कबीर सच्चे सत्यान्वेषक थे। उनका धर्म बड़ा व्यापक है। जिस प्रकार उनका ब्रह्म व्यापक और सब जाति वर्गों का जन्म दाता है, उसी प्रकार उनका धर्म भी व्यापक है। इनका धर्म सार्वभौमिक और युगों तक अभिनव बना रहने वाला धर्म है। देशकाल की सीमाएँ उनके धर्म और उनके रूप का स्पर्श नहीं कर पाती हैं। कबीर का धर्म–धनी–दीन, बालक–वृद्ध, नर नारि सबके लिए समान रूप से उपयोगी और महत्वपूर्ण है। उनके व्यापक धर्म का

आधार मानव की शाश्वत सद्वृत्तियाँ हैं। यही शाश्वत सदवृत्तियाँ जीवन को उदात्त और समुन्नत करती हैं। कबीर ने मानव जीवन को उन्नत और विकासशील बनाने के लिए उपदेश दिए। कबीर की वानियों में बारम्बार इन्हीं बातों पर जोर दिया गया है। उन्होने ओदार्य, दया, क्षमा, त्याग, सहनशीलता, अहिंसा, धैर्य और सत्य को मानव जीवन और मानव प्रकृति के अविच्छिन्न अंग माने हैं। उनके काव्य में इन विषयों पर सतशः साखियों की रचना हुई और प्रत्येक साखी उनकी सत्यानुभूति को दृढ़ प्रमापित करने में समर्थ है।

कबीर की धार्मिकता बाह्याचारों, बाह्याडम्बरों से पृथक और परे है। उनकी धार्मिकता में छुआ–छूत, चंदन–तिलक, व्रत, माला, जप–तप, बांग, नमाज और अजान में नहीं सन्निहित है, वरन् उनकी धार्मिकता व्यापक है, शुद्ध है। उनका संदेश है कि मानव को मानव के सहज धर्म का परिपालन करना चाहिए। उसे ''सुरत्व की जननी'' मानव योनि को दूषित कर्म करके अपना अहित नहीं करना चाहिए। यही कबीर की धार्मिकता है, यही उनका व्यापक धर्म है।

जातीयता

कबीर साहित्य की तृतीय महान परम्परा जातीयता है। अपनी वाणी द्वारा कबीर ने देश को एक महान सांस्कृतिक चेतना में बाँध दिया था। देश के प्रत्येक क्षेत्र में महान सांस्कृतिक चेतना के फलस्वरूप जातीयता का विकास हुआ। उनकी भाषा में समस्त भाषाओं, विभाषाओं और बोलियों का मधुर मिश्रण है। उन्होंने व्याकरण के नियमों की ओर भी ध्यान नहीं दिया। जिससे स्पष्ट हो जाता है कि जनता के सम्मुख वे केवल अपने भावों को ही अभिव्यक्त करना चाहते थे। काव्य रचना की ओर उनका ध्यान न था। इसमें संदेह नहीं कि उनकी लेखनी, मुख से निकले हुए शब्द हिन्दी साहित्य की अमूल्य निधि बन गए हैं।

प्रगतिशीलता

कबीर साहित्य की चतुर्थ महान परंपरा है प्रगतिशीलता। सामान्यतया प्रगतिशीलता का अर्थ होता है स्पंदनशीलता, उत्तरोत्तर उन्नति के पथ पर अग्रसर रहना।

कबीर ने समाज, साहित्य, धर्म सभी में प्रगतिशील विचारों का समावेश कर युग–युग से पीड़ित एवं प्रताडित जनता का उद्धार किया। जिन विकृत तत्वों के प्रति उनकी प्रतिक्रिया जाग्रत हुई, उनमें मुख्य तत्व हैं– 1. पुरोहिवाद 2. वर्णाश्रम धर्म 3. मूर्ति पूजा 4. धार्मिक अंधविश्वास 5. वाह्याडम्बर 6. पूजा विधि 7. पौराणिकता।

हिन्दू धर्म के सामान्य विश्वास अपने मूल रूप में बड़े ही सात्विक थे, परंतु मध्य युग तक आते–आते ये सात्विक विश्वास अंधविश्वासों में परिणित हो गए, और उनका प्रचार धर्म के सभी क्षेत्रों में था। मध्ययुगीन जनता के लिए ये विश्वास परंपरागत रूढ़ियों के रूप में बनकर रह गए थे।

कबीर की वाणी इन्हीं विकृत रूपों का खंडन करने में प्रवृत्त हुई। आपसी द्वेष की राक्षसी प्रवृत्ति को रोककर कबीर सत्धर्म की प्रतिष्ठा में कटिबद्ध हो गए। रक्तपात, भौतिकता और प्रतिकार द्य भावना के विरुद्ध उपदेश दिए। संध्या, वंदना, पंच, महायज्ञ, श्राद्ध, षोड्य– संस्कार, विविध प्रकार के व्रत, तीर्थ, शौचाशौच संबंधी आचारों का खंडन किया जो कि केवल परंपरागत ही रह गए थे।

कबीर साहित्य प्रगतिशील है। क्या भाषा, क्या भाव, क्या रस, क्या छंद हर दृष्टि से उन्होने प्रयोग किए जो उनके युग की मान्यताओं को पुष्टता प्रदान करते हुए भविष्य के लिए मानदंड बन गए।

शाश्वतता

संत काव्य में मानव जीवन की अनेक शाश्वत प्रवृत्तियों का बड़ी सुंदरता के साथ चित्रण हुआ। युग–युग से मनुष्य प्रेम, क्षमा, दया, विश्व बंधुत्व और उदारता में विश्वास करता चला आ रहा है।

मनुष्य सदैव से उदात्त वृत्तियों से युक्त रहा है। हीन कार्यों से हटकर हमारा मन स्वतः शांतिमय वातावरण में रमना चाहता है। कबीर के काव्य में मनुष्य की इन्हीं जन्मजात और शाश्वत प्रवृत्तियों पर जोर दिया गया है। मानव समाज के संघर्षमय वातावरण का परित्याग करके आध्यात्मिक वातावरण में संतोष प्राप्त करता है। कबीर ने आध्यात्म की प्रतिष्ठा के लिए बार–बार उपदेश दिया है। आध्यात्म का विषय शाश्वत और चिरंतन है, इसी कारण कबीर साहित्य शाश्वत साहित्य है।

कबीर ने साहित्य की रचना किसी स्वार्थ भाव से प्रेरित होकर नहीं की थी। उनकी रचनाएँ 'स्वतः सुखाय और बहुजन हितायश हुई थी। इसलिए इन रचनाओं में मानव जीवन के हित की भावना अप्रत्यक्ष रूप से प्रवाहित होती हुई शताब्दियों से जनता को सही मार्ग पर अग्रसर कर रही हैं।

सजीवता

कबीर साहित्य की षष्ठ महान परंपरा सजीवता है। कबीर के प्रति यह आरोप लगाया जाता है कि वे पलायनवादी थे और उन्होने भारतीय जनता को पलायनवाद का हर प्रकार से पाठ पढ़ाया। जिसके फलस्वरूप भारतीय जनता अकर्मण्य बनती गई है। लेकिन तथ्य इसके विरुद्ध हैं । कबीर ने अपने युग की निराश जनता को आशा का प्रकाश दिखाया। उन्होंने भग्न हृदयों में उल्लास का संचार किया। जीवन को उन्होने जीने योग्य बनाया और इस प्रकार से उन्होंने उदात्त एवं सात्विक जीवन का उपदेश देकर साहित्य के क्षेत्र में नवीन परंपराओं को स्थापित किया।

कबीर जी की दार्शनिकता की गहराई में जाएं तो साफ परिलक्षित हो जाता है कि आप एक 'युगदृष्टा' रहे ने जहाँ धार्मिक और दार्शनिक क्षेत्र में सुधार लाने का प्रयास किया है, वहीं उन्होंने समकालीन जीवन में परिव्याप्त जातिगत,

ऊँच–नीच और भेद–भाव की भावना, छूआछूत की भावना, दुराचार की समस्या, मदिरापान और मांस–भक्षण की कुप्रवृत्तियों आदि पर भी तीव्र प्रहार किया है।

आखिर में धूम–फिर कर वहीं शिक्षा दर्शन व उपदेश संत कबीरदास जी की इसी वाणी पर केन्द्रित हो जाती है कि दुनिया में फैले अज्ञान के अंधेरे की दूर करना जरूरी क्योंकि इसी अज्ञानता से अंधविश्वास, कर्मकांड, पाखंड, छलकपट, विद्वेष, अन्याय, व परेशानियों का भण्डार बढता है मानव व मानवता की पुकार दब जाती है अंधेरा फैल जाता है जिसे दूर करने के लिए संत कबीरदास पूरी मानवता के लिए सर्चलाइट का काम कर सकता है।